स्याद्वाद
बाल शिक्षा

भाग-४

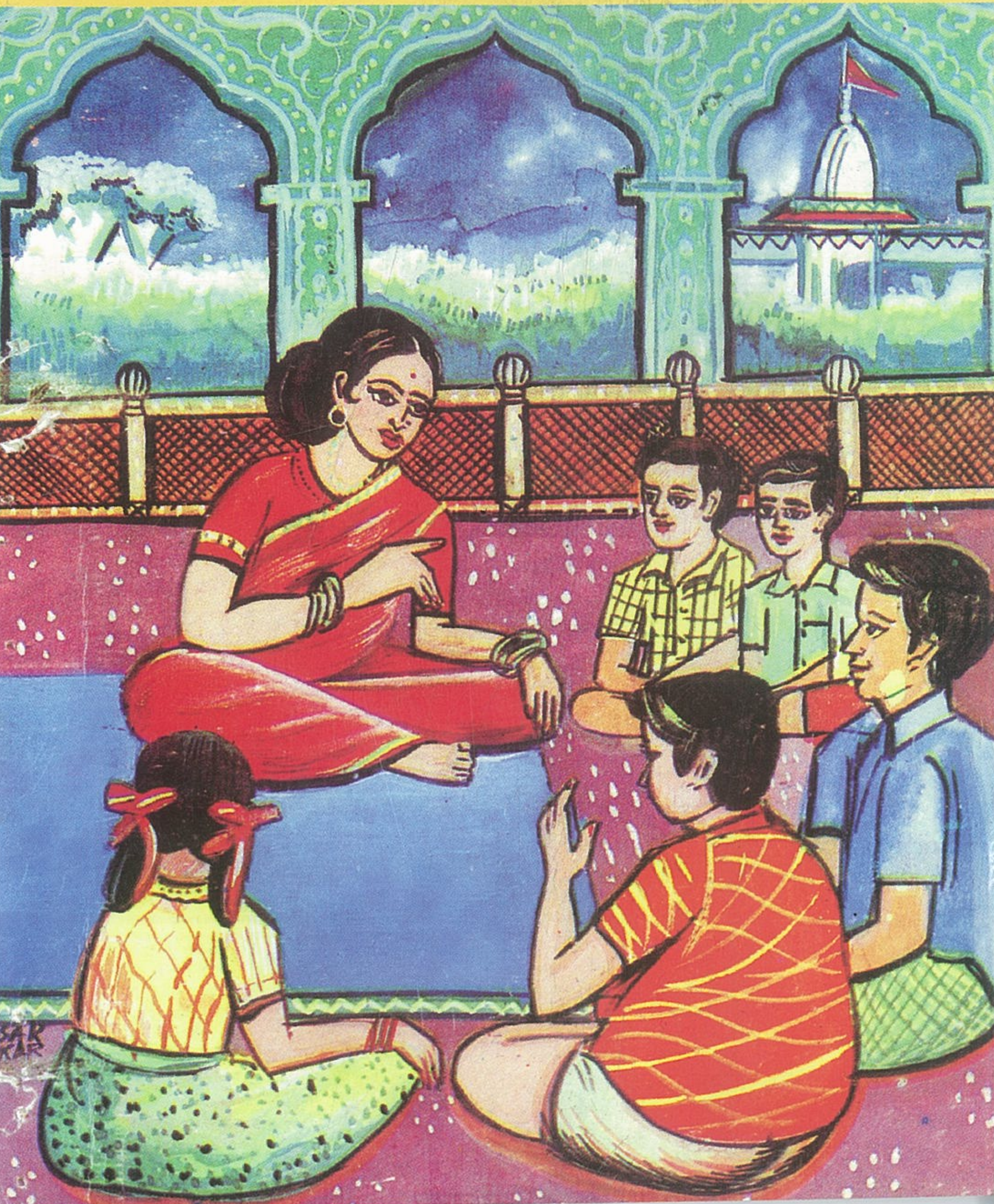

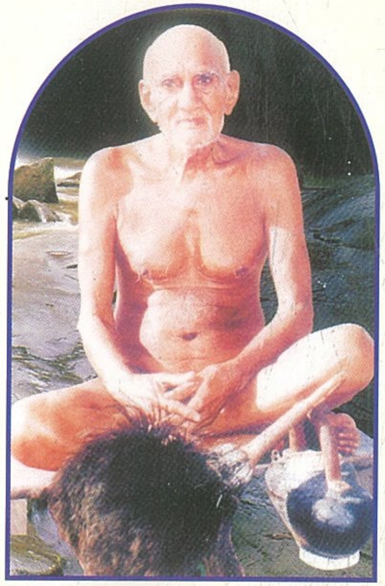

आचार्य श्री 108 विमलसागरजी महाराज

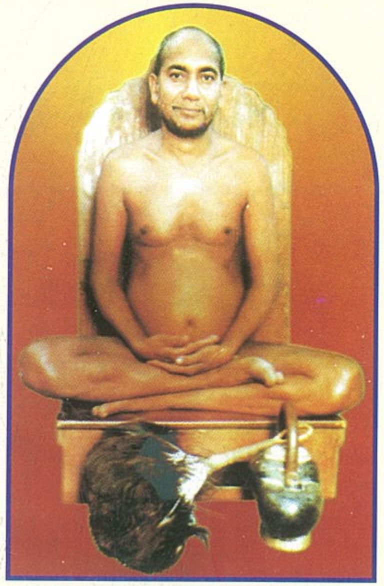

आचार्य श्री 108 भरतसागरजी महाराज

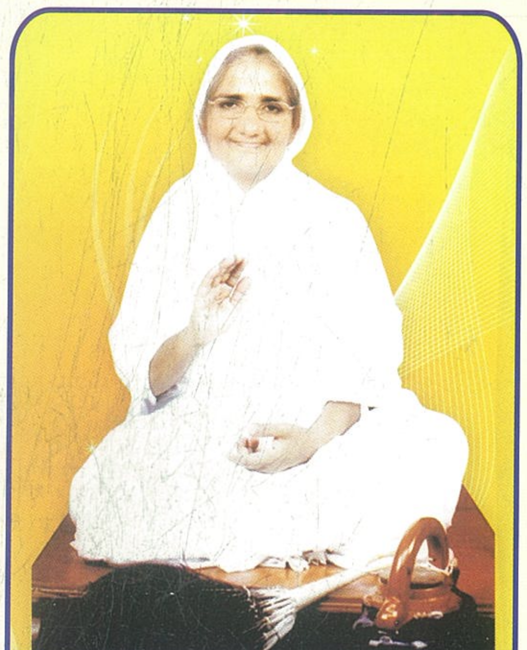

गणिनी आर्यिका
श्री 105 स्याद्वादमती माताजी

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

स्याद्वाद बाल-शिक्षा

चौथा भाग

* लेखिका *

गणिनी आर्यिका श्री 105 स्याद्वादमती माताजी

भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद्

भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद् पुष्प संख्या- 140

आशीर्वाद : प.पू. आचार्य श्री 108 विमलसागरजी महाराज
प. पू. आचार्य श्री 108 भरतसागरजी महाराज

संयोजन : आर्यिका श्री 105 यशस्विनी माताजी

ग्रन्थ : स्याद्वाद बाल शिक्षा (भाग-4)

लेखिका : गणिनी आर्यिका श्री 105 स्याद्वादमती माताजी

संस्करण : बाईसवाँ

वीर निर्वाण सम्वत् 2039 सन् 2013

सर्वाधिकार सुरक्षित :

प्रकाशक : भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद्

पुस्तक प्राप्ति स्थान : (1) गणिनी आर्यिका स्याद्वादमती माताजी संघ

(2) आचार्य विमल भरत साहित्य सदन
सम्मेदशिखरजी

(3) श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर
डी-210, श्यामपार्क एक्सटेंशन
महावीर वाटिका, साहिबाबाद (उ.प्र.)

मूल्य : सदुपयोग

मुद्रक : सुभाष ऑफसेट
मदनगंज-किशनगढ़ (राज.)
फोन : 01463-242121

अनुक्रमणिका

१. प्रार्थना ३

२. नवदेवता स्तवन ४

३. महावीराष्टक ६

४. पाक्षिक श्रावक ८

५. नैष्ठिक श्रावक २५

६. मुनिचर्या ३४

७. जैनदर्शन के मुख्य सिद्धान्त ३९

८. सरस्वती नाम स्तोत्र ४४

९. जिनवाणी स्तुति ४५

१०. गुर्वाष्टक ४६

प्रार्थना

हे वीतराग स्वामी, नित प्रार्थना हमारी ।
अज्ञान को तजें हम, बन ज्ञान के पुजारी[२] ।।

हिंसादि पाप तजकर
सत्पथ पे हम चलेंगे,
क्रोध कषाय तजकर ।
समभाव हम धरेंगे ।।१।। हे वीतराग०

माता पिता की सेवा
भक्ति गुरुजनों की,
प्रातः सुजल्दी उठकर ।
नित करेंगे ईश भक्ति ।।२।। हे वीतराग०

दो नाथ हमको शक्ति
तुम सम बनेंगे हम भी,
दुःखियों की सेवा करके ।
पायेंगे आत्म शक्ति ।।३।। हे वीतराग०

नव देवता स्तवन

दोहा

परमेष्ठी पांचों नमूं, जिनवाणी उरलाय ।
जिन मारग को धारकर, चैत्य चैत्यालय ध्याय ।।

(तर्ज—अहो जगत् गुरु देव सुनियो..............)

अरिहन्त प्रभु का नाम, है जग में सुखदाई ।
घाति चतु क्षयकार, केवल ज्योति पाई ।
वीतराग सरवज्ञ, हित उपदेशी कहाये ।
ऋद्धि-सिद्धि सब पाय, जो नित भक्ति सुध्यावे ।।१।।

सिद्ध प्रभु गुणखान, सिद्धि के हो प्रदाता ।
कर्म आठ सब काट, करते मुक्ति वासा ।।
शुद्ध बुद्ध अविकार, शिव सुखकारी नाथा ।
ऋद्धि-सिद्धि सब पाय, जो नित नावे माथा ।।२।।

आचारज गुणकार, पञ्चाचार को पाले ।
शिक्षा दीक्षा प्रधान, भविजन के दुख टाले ।।
अनुग्रह निग्रह काज, मुक्ति मारग चलते ।
ऋद्धि-सिद्धि सब पाय, जो आचारज भजते ।।३।।

ज्ञान ध्यान लवलीन, जिनवाणी रस पीते ।
अध्ययन शिक्षा प्रदान, संघ में जो नित करते ।।
रत्नत्रय गुणधाम, उपदेशामृत देते ।
ऋद्धि-सिद्धि सब पाय, जो नित उवज्झाय भजते ।।४।।

दर्शन ज्ञान चरित्र, मुकती मार्ग कहाये ।
तिनप्रति साधन रूप, साधु दिगम्बर भाये ॥
विषयाशा को त्याग, निज आतम चित पागे ।
ऋद्धि-सिद्धि सब पाय, जो नित साधु ध्यावे ॥५॥

तत्व द्रव्य गुण सार, वीतराग मुख निकसी ।
गणधर ने गुणधार, जिनमाला इक गूंथी ॥
'स्याद्वाद' चिह्न सार, वस्तु अनेकान्त गाई ।
ऋद्धि-सिद्धि सब पाय, जो जिनवाणी ध्याई ॥६॥

सम्यक् श्रद्धा सार, देव शास्त्र गुरु भाई ।
सम्यक् तत्त्व विचार, सम्यक् ज्ञान कहाई ॥
सम्यक् होय आचार, सम्यक् चारित गाई ।
ऋद्धि-सिद्धि सब पाय, जो जिन मारग धाई ॥७॥

वीतराग जिनबिम्ब, मूरत हो सुखदाई ।
दर्पण सम निजबिम्ब, दिखता जिसमें भाई ॥
कर्म कलंक नशाय, जो नित दर्शन पाते ।
ऋद्धि-सिद्धि सब पाय, जो नित चैत्य को ध्याते ॥८॥

वीतराग जिनबिम्ब, कृत्रिमाकृत्रिम जितने ।
शोभत हैं जिस देश, हैं चैत्यालय उतने ।
उन सबकी जो सार, भक्ति महिमा गावे ।
ऋद्धि-सिद्धि सब पाय, जो चैत्यालय ध्यावे ॥९॥

दोहा

नव देवता को नित भजे, कर्म कलंक नशाय ।
भव सागर से पार हो, शिव सुख में रम जाय ॥

नोट—प्रतिदिन प्रातः पाठ करने से जीवन सुख, शान्ति और समृद्धि को प्राप्त होता है ।

●

३–महावीराष्टक स्तोत्र

(कविवर भागचन्द कृत)

यदीये चैतन्य मुकुर इव भावाश्चिदचितः
समं भान्ति ध्रौव्य-व्यय-जनि-लसन्तोऽन्तरहिताः ।
जगत्साक्षी मार्ग-प्रकटन-परो भानुरिव यो
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥१॥

अताम्रं यच्चक्षुः कमल-युगलं स्पन्द-रहितं
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥२॥

नमन्नाकेन्द्राली-मुकुट-मणि-भा-जाल-जटिलं
लसत्पादाम्भोज-द्वयमिह यदीयं तनुभृताम् ।
भवज्ज्वाला-शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥३॥

यदर्चा-भावेन प्रमुदित-मना दर्दुर इह
क्षणादासीत्स्वर्गी गुण-गण-समृद्धः सुख-निधिः ।
लभन्ते सद्भक्ताः शिव-सुख-समाजं किमु तदा
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥४॥

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत-तनुर्ज्ञान-निवहो
विचित्रात्माप्येको नृपति-वर-सिद्धार्थ-तनयः ।
अजन्मापि श्रीमान् विगत-भव-रागोद्भुत-गतिः
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥५॥

यदीया वाग्गङ्गा विविध-नय-कल्लोल-विमला
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ।
इदानीमप्येषा बुध-जन-मरालैः परिचिता
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥६॥

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवन-जयी काम-सुभटः
कुमारावस्थायामपि निज-बलाद्येन विजितः ।
स्फुरन्नित्यानन्द-प्रशम-पद-राज्याय स जिनः
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥७॥

महामोहातङ्क-प्रशमन-पराकस्मिक-भिषक्
निरापेक्षो बन्धुर्विदित-महिमा मङ्गलकरः ।
शरण्यः साधूनां भव-भयभृतामुत्तमगुणो
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥८॥

महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या 'भागेन्दुना' कृतम् ।
यः पठेच्छ्रणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ॥९॥

४–पाक्षिक श्रावक

वीतराग भगवान को, नमहुँ त्रियोग सम्हार ।
श्रावक व्रत चर्या लिखूँ, आलबाल हितकार ॥

प्रश्न १– श्रावक किसे कहते हैं और उसके कितने भेद हैं ?

उत्तर– श्रद्धावान, विवेकवान एवं क्रियावान महानुभावों को श्रावक कहते हैं ।

श्रावक के १-पाक्षिक २-नैष्ठिक ३-साधक ये तीन भेद हैं ।

१ - पाक्षिक—हिंसादिक पाँच पापों का त्यागरूप पक्ष जिसका है तथा जो अभ्यास रूप से श्रावक धर्म का पालन करता है उसको पाक्षिक श्रावक (या प्रारब्ध देशसंयमी) कहते हैं ।

२ - नैष्ठिक—जो निरतिचार रूप से श्रावक धर्म पालन करता है उसको नैष्ठिक श्रावक कहते हैं ।

३ - साधक—जिसका देशसंयम पूर्ण हो चुका है और आत्मध्यान में लीन होकर समाधिमरण करता है उसको साधक श्रावक (निष्पन्न देशसंयमी) कहते हैं ।

प्रश्न २– पाक्षिक श्रावक के योग्य क्रियाओं का वर्णन कीजिये ?

उत्तर– पाक्षिक श्रावक को १-देवपूजा २-गुरूपासना ३-पात्रदान ये तीन धार्मिक कार्य तथा कीर्ति बढ़ाने वाले सत्कर्म लोकानुसार तथा आगमानुसार हमेशा करते रहना चाहिये ।

अर्थात् पाक्षिक श्रावक को हमेशा अपनी शक्ति के अनुसार नित्यमहादि पूजाओं के द्वारा अर्हन्त भगवान् की पूजा करनी चाहिये । क्योंकि जिस गृहस्थाश्रम में जिनेन्द्रदेव की पूजा, गुरुभक्ति एवं धार्मिकों से गाढ़प्रीति, पात्रदान, करुणाबुद्धि, विपद्ग्रस्तों की सहायता, निर्मल सम्यग्दर्शन की पूजा, तत्त्वाभ्यास नहीं हो वह गृहस्थाश्रम नहीं अपितु एक श्मशान भूमि है, क्योंकि वहाँ सिर्फ पंचसून कार्यों से जीवों को मारा जाता है, उस पाप की शुद्धि नहीं की जाती है ।

प्रश्न ३– पूजा के कितने भेद हैं ?

उत्तर– पूजा के दो भेद हैं—१-द्रव्य पूजा २-भाव पूजा ।

(अ) **द्रव्य पूजा**—शुद्ध लक्ष्य से जो भगवान का पूजन किया जाता है अर्थात् अष्ट द्रव्य रूप सामग्री लेकर जो पूजन किया जाता है, वह द्रव्य पूजा कहलाती है ।

(ब) **भाव पूजा**—पूज्य महापुरुषों का स्तोत्र, वन्दना आदि के माध्यम से गुण चिन्तन करना भाव पूजा कहलाती है ।

प्रश्न ४– द्रव्य पूजा के भेद बताइये ?

उत्तर– द्रव्य पूजा के भेद ५ हैं—१-नित्यमह पूजा २-अष्टाह्निक पूजा ३-इन्द्रध्वज पूजा ४-महामह पूजा ५-कल्पद्रुम पूजा ।

प्रश्न ५– नित्यमह पूजा का स्वरूप लिखिये ?

उत्तर– (१) अपने घर से जल, चन्दनादि सामग्री लेकर जिन मन्दिर जाना एवं अपनी सामग्री से वीतराग प्रभु की पूजा करना नित्यमह पूजा है ।

(२) अपनी शक्ति अनुसार प्रतिमा और जिनमन्दिर बनवाना । पूजन के लिये नित्य सामग्री मिलती रहे यह सोचकर खेत, दुकानादि देना (यह भी शास्त्रोक्त है) तथा जिन कार्यों से निरन्तर धर्म भावना होती रहे ऐसे रथ और पांडुक शिला, चँवर आदि साधन जुटाना भी नित्यमह पूजा है ।

(३) पूर्वाह्न, मध्याह्न, अपराह्न तीनों समयों में प्रभु की आराधना, भक्ति, स्तुति आदि करना । मुनियों को आहारादि दान देना ये सब नित्यमह पूजा के अंग हैं ।

प्रश्न ६– अष्टाह्निक पूजा किसे कहते हैं ?

उत्तर– प्रतिवर्ष नन्दीश्वर पर्व (आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुन) में शुक्ल पक्ष की अष्टमी से पूनम तक भव्य पुरुषों के द्वारा की जाने वाली पूजा अष्टाह्निक पूजा है ।

प्रश्न ७– इन्द्रध्वज पूजा का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– जो देवपूजा इन्द्रादिक देवों के द्वारा की जाती है उसे इन्द्रध्वज पूजा कहते हैं ।

प्रश्न ८– महामह पूजा का लक्षण बताइये ?

उत्तर– जो जिन पूजा भक्तिपूर्वक मुकुटबद्ध, मण्डलेश्वर राजाओं के द्वारा की जाती है उसे महामह सर्वतोभद्र, चतुर्मुख पूजा कहते हैं ।

सब जीवों को कल्याणकारी होने से इस पूजन का नाम सर्वतोभद्र है ।

चतुर्मुख जिनबिम्ब विराजमान करके चारों दिशाओं में पूजा की जाती है इसलिये भी इसे महामह पूजा कहते हैं । (चतुर्मुख, महामह, सर्वतोभद्र तीनों नाम सार्थक हैं)

प्रश्न ९– कल्पद्रुम पूजा किसे कहते हैं ?

उत्तर– इच्छित दान के द्वारा जगत् के प्राणियों की आशाओं को पूर्ण करके चक्रवर्तियों के द्वारा जो अरहन्त प्रभु की पूजा की जाती है उसे कल्पद्रुम पूजा कहते हैं ।

अर्थात् चक्रवर्ती छः खण्ड विजय करके जब साम्राज्य पद को प्राप्त करते हैं तब प्रजा इच्छानुसार (किमिच्छिक) दान देते हैं । उस दान से सबको सन्तुष्ट करके राजाओं के साथ अरहन्त प्रभु की पूजा करते हैं । उस पूजा को कल्पद्रुम पूजा कहते हैं ।

प्रश्न १०– नित्य-नैमित्तिक पूजा का स्वरूप लिखिये ?

उत्तर– नित्य वीतराग प्रभु की जो पूजा की जाती है वह नित्य पूजा है एवं पर्वादि का निमित्त पाकर जो पूजा की जाती है वह नैमित्तिक पूजा है । दोनों पूजायें उपर्युक्त पूजाओं में गर्भित हो जाती हैं ।

प्रश्न ११– द्रव्य पूजा का अधिकारी कौन है एवं भाव पूजा का अधिकारी कौन है ?

उत्तर– द्रव्य पूजा के लिए गृहस्थ और भावपूजा के लिये मुनिजन ही अधिकारी हैं । गृहस्थ जन भावशुद्धि के लिये, द्रव्य का त्याग करके लोभ कषाय को कम करते हुए द्रव्य पूजा करते

हैं। हाँ, गृहस्थ भी शुद्ध लक्ष्यपूर्वक द्रव्य के साथ भाव को साध लेता है।

भावपूजा के पूर्व अधिकारी तो वीतराग प्रभु के वचनानुसार प्रवृत्ति करने वाले स्वात्मस्वरूप में लीन होने वाले, पवित्र आज्ञा को अखंड पालने वाले मुनिगण ही होते हैं। अर्थात् द्रव्य पूजा के अधिकारी मुख्य रूप से गृहस्थ ही हैं और भावपूजा के अधिकारी निश्चय से मुनिगण ही हैं।

प्रश्न १२– क्या मुनि जन द्रव्य पूजा नहीं करते हैं ?

उत्तर– मुनिराज द्रव्य पूजन के त्यागी होते हैं। उनकी पूजा अलौकिक होती है, उसकी एक झलक इस प्रकार है—

मुनिराज निर्मल दया जल से स्नान करके, संतोषरूपी शुद्ध वस्त्र धारण करके, विवेकरूपी तिलक लगाते हैं। बाह्यशुद्धि के द्वारा पवित्र आशय बनाकर प्रभु चरणों में भक्ति शीतल जलधारा देते हैं। श्रद्धारूपी चंदन लगाते हैं। इसी प्रकार उत्तम गुणोंरूपी अक्षत को चढ़ाकर, क्षमारूपी सुगन्धित पुष्पमाला एवं ब्रह्मचर्यरूपी नैवेद्य से देवाधिदेव की भावपूजा करते हैं। शुद्धात्मानुभव रूप मंगलमय दीप को प्रभु के आगे रखते है एवं ज्ञानार्जन में शुभ अध्यवसाय रूप धूप चढ़ाते हैं एवं इन्द्रिय निरोधरूप मंगलमय नृत्य करते हैं। सुसंयम रूप बाजे बजाते हैं, दैदीप्यमान उल्लासरूपी आरती उतारते हुए मुनिराज अशुद्ध आत्मदशा को त्याग करके शुद्धात्म दशा को प्राप्त कर अनन्त कर्मों की निर्जरा करते हैं।

प्रश्न १३– पूजा की विधि बताइये ?

उत्तर– स्त्री संभोग या कृष्यादिक कर्मों से शरीर में पसीना आना, तन्द्रा, आलस्य तथा मन में दुर्बलता आदि आने से शरीर और मन संक्लेश युक्त रहता है। इसलिए गृहस्थ को स्नान करके ही पूजा करनी चाहिये।

फिर सर्वप्रथम घर से शुद्ध वस्त्र पहनकर, द्रव्य धोकर उत्तमोत्तम द्रव्यों से पूजा का थाल सजाकर मंदिरजी में ले जाना चाहिये। मंदिरजी में पहुँचकर दर्शनविधि के पश्चात्

अभिषेक क्रिया करनी चाहिये। पश्चात् अपने अन्दर भगवान् की "दासता" स्वीकार कर यह विचार करना चाहिए। हे प्रभो ! एक धनवान धन की प्राप्ति के लिए धनिक की पूजा स्तुति करता है, सेवा करता है। मैं भी आपकी स्तुति सेवा करता हूँ मुझे भी आपके समान वीतरागता की प्राप्ति हो, मैं भी आपके समान निर्मलता को प्राप्त हो जाऊँ।

पश्चात् विनयपाठ, णमोकार मंत्र एवं स्वस्ति मंगल आदि बोलना चाहिए।

प्रश्न १४– पूजा के कितने अंग हैं ?

उत्तर– पूजा के ७ अंग हैं—१-अभिषेक २-आह्वान ३-स्थापन ४-सन्निधिकरण ५-पूजा ६-शान्तिपाठ ७-विसर्जन।

प्रश्न १५– अभिषेक और आह्वानन का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– **अभिषेक**—प्रासुक जल आदि उत्तमोत्तम द्रव्यों से प्रतिदिन जिनाभिषेक करना चाहिये।

आह्वानन—जिस प्रकार अपने घर पर किसी महापुरुष के आने पर हम आइये-आइये-आइये शब्दोच्चारण करते हैं उसी प्रकार तीन लोक के नाथ वीतराग प्रभु को अपने हृदय रूप मंदिर में बुलाता हुआ श्रावक मुख से "ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्र-गुरु समूह अत्र अवतर अवतर अवतर आह्वानन" शब्दोच्चारण करता हुआ ठोने में पुष्पों का क्षेपण करता है। यह आह्वानन विधि है।

प्रश्न १६– स्थापना का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– जिस प्रकार घर पर किसी महापुरुष के आने पर आइये के बाद बैठिये, बैठिये कहते हैं, उसी प्रकार जिस भव्य ने प्रभु को अपने मन मंदिर में बुलाया है वह प्रभु से प्रार्थना करता है, हे प्रभो ! मेरे मन मंदिर में विराजिये बैठिये, बैठिये, बैठिये और ठोने में वह पुष्पों को दोनों हाथों से क्षेपण करता है। ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह अत्र तिष्ठ ठः ठः ठः स्थापना भव्य इस प्रकार प्रभु को अपने मन में स्थापित विराजमान करता है। यह स्थापना विधि है।

प्रश्न १७– सन्निधिकरण का स्वरूप स्पष्ट कीजिये ?

उत्तर– जिस प्रकार किसी महापुरुष के घर आने पर हम आइये, बैठिये हमारे समीप बैठिये कहकर उसे अपने समीप में बैठाते हैं उसी प्रकार भव्यात्मा आनन्दविभोर होकर प्रभु को अपने हृदय में स्थापित करते हुए कहता है, हे प्रभो ! आप सदा के लिये मेरे निकट हो जाइये, इस प्रकार सन्निधिकरण के द्वारा भक्त भगवान को अपने हृदय में बसाता हुआ ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण कहकर ठोने में पुष्पों को क्षेपण करता है । यह सन्निधिकरण विधि है ।

प्रश्न १८– पूजा ?

उत्तर– प्रथम देव अर्हन्त श्रुत सिद्धांत जु,
गुरु निरग्रन्थ महंत मुक्तिपुर पंथ जु ।
तीन रतन जगमांहि सु ये भवि ध्याइये,
तिनकी भक्ति प्रसाद परम पद पाइये ॥

दोहा– पूजौं पद अरहंत के पूजौं गुरु पद सार ।
पूजौं माता सरस्वती, नितप्रति अष्ट प्रकार ॥

ॐ ह्री देव-शास्त्र-गुरु समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं । ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरु समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरु समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं ।

प्रश्न १९– जल चढ़ाने का छन्द बताते हुए, जल क्यों चढ़ाया जाता है, कारण बताओ ?

उत्तर–

गीता छन्द

सुरपति उरग नरनाथ तिनकरि वन्दनीक सुपदप्रभा,
अतिशोभनीक सुवरण उज्ज्वल देख छवि मोहित सभा ।
वर नीर-क्षीर समुद्र घट भरि अग्र तसु बहुविधि नचूँ,
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥१॥

दोहा– मलिन वस्तु हरलेत सब जल स्वभाव मलछीन ।
जासों पूजों परमपद देवशास्त्र गुरु तीन ॥१॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

उद्देश्य– १-जन्म-जरा-मृत्यु को नाश करने के लिए जल चढ़ाया जाता है ।

२- जल चढ़ाते समय भक्त विचारता है कि हे प्रभो ! यद्यपि यह जल बाहर में लगी गन्दगी को दूर करने वाला है, किन्तु आपका गुणरूपी जल मेरे राग-द्वेषरूपी मल को दूर करने वाला है । अतः आत्मा में लगी ज्ञानवरणी, दर्शनावरणी की रज को धोने के लिये जल चढ़ाया जाता है ।

प्रश्न २०– चन्दन चढ़ाने का छन्द बताते हुए उसके चढ़ाने का कारण बताइये ?

उत्तर–

गीता छन्द

जे त्रिजग-उदर मंझार प्रानी तपत अति दुद्धर खरे ।
तिन अहितहरन सुवचन जिनके परम शीतलता भरे ॥
तसु भ्रमर लोभित घ्राणपावन सरस चंदन घिसि सचूँ ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥२॥

दोहा– चन्दन शीतलता करे तपत वस्तु परवीन ।
जासों पूजों परमपद देवशास्त्र गुरु तीन ॥२॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामिति स्वाहा ।

उद्देश्य– जिस प्रकार धूप से सिक्त पैरों को चन्दन का लेप शांति प्रदान करता है, उसी प्रकार जिनेन्द्रदेव के गुणरूपी शीतल सूगन्धित चन्दन का लेप संसार के दुखों से संतप्त जीवों को भव समुद्र पार करता है इसलिये संसार के आतप को दूर करने के लिये चन्दन चढ़ाया जाता है ।

प्रश्न २१– अक्षत चढ़ाने का छन्द बताते हुए, चढ़ाने का कारण बताइये ?

उत्तर–

गीता छन्द

यह भवसमुद्र अपार तारण के निमित्त सुविधि ठई ।
अति दृढ़ परमपावन जथारथ भक्ति वर नीका सही ॥

उज्ज्वल अखंडित शालि तंदुल पुञ्ज धरि त्रयगुण जचूँ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु-निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ।।३।।

दोहा– तंदुल सालि सुगंधि अति परम अखंडित बीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ।।३।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

उद्देश्य– १- अक्षय अविनाशी पद की प्राप्ति के लिये अक्षत चढ़ाया जाता है ।

२- अक्षत अविनाशी पद नहीं देता है परन्तु जिनेन्द्रदेव के गुणरूपी अक्षतों की प्राप्ति के लिए जिन चरणों में अक्षत चढ़ाया जाता है । जितना उत्तम द्रव्य होगा उतना फल भी उत्तम होगा ।

प्रश्न २२– अक्षत में चावल ही क्यों चढ़ाये जाते हैं अन्य धान्य क्यों नहीं ?

उत्तर– चावल एक अक्षत धान्य हैं । गेहूँ को चाहने वाला गेहूँ को, ज्वार का इच्छुक ज्वारादि को बोता है किन्तु चावल का इच्छुक व्यक्ति चावल को नहीं बोता है शाली को बोता है । चावल को अक्षय पद मिल गया है इसलिये अक्षय पद की प्राप्ति के लिये अक्षय पद प्राप्त धान्य चावल चढ़ाया जाता है ।

प्रश्न २३– पुष्प को चढ़ाने का छन्द बताते हुए, पुष्पों के चढ़ाने का कारण बताइये ?

उत्तर– **गीता छन्द**

जे विनयवंत सुभव्यउर-अंबुज प्रकाशन भान हैं ।
जे एकमुख चारित्र भाषत त्रिजगमाँहि प्रधान हैं ।
लहि कुन्दकमलादिक पहुप भव-भव कुवेदनसों बचूँ ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु-निरग्रंथ नित पूजा रचूँ ।।४।।

दोहा– विविध भाँति परिमल सुमन भ्रमर जास आधीन ।
जासों पूजों परमपद देवशास्त्र गुरु तीन ।।४।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

उद्देश्य– जीव की समस्त शक्ति को नाश करने वाला, महान् शत्रु ''कामदेव'' है जिसे वीतराग प्रभु के अलावा कोई जीत नहीं पाया । ऐसे काम को नाश कर जिन गुणरूपी पुष्पों की माला की प्राप्ति के लिये जिनेन्द्रदेव के चरणों में पुष्प को चढ़ाते हैं ।

प्रश्न २४– नैवेद्य का छन्द बताते हुए उसके चढ़ाने का कारण बताइये ?

उत्तर– **गीता छन्द**

अति सबल मदकंदर्प जाको क्षुधा-उरग अमान है ।
दुस्सह भयानक तासु नाशन को सुगरुड़ समान है ।।
उत्तम छहों रसयुक्त नित, नैवेद्य करि घृत में पचूँ ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ।।५।।

दोहा– नानाविध संयुक्त रस व्यञ्जन सरस नवीन ।
जासों पूजों परमपद देवशास्त्र गुरु तीन ।।५।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० स्वाहा ।

उद्देश्य– भव्यात्मा क्षुधारोग की शान्ति के लिये नैवेद्य चढ़ाता है । वह सोचता है कि यद्यपि यह नैवेद्य अतृप्तिकारी है, भूख को शान्त नहीं कर सकता है किन्तु हे प्रभो ! आपके गुणरूपी व्यञ्जनों का मननरूपी अनुभव आहार मुझे अविनाशी सुख को देने वाला है । जिन गुणरूपी सुन्दर मधुर व्यञ्जनों की प्राप्ति के लिये नैवेद्य चढ़ाया जाता है ।

प्रश्न २५– दीप का छन्द बताते हुए दीप चढ़ाने का कारण बताइये ?

उत्तर– **गीता छन्द**

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने मोह तिमिर महाबली ।
तिहि कर्मघाती ज्ञानदीप प्रकाश ज्योति प्रभावली ।।
इह भाँति दीप प्रजाल कंचन के सुभाजन में खचूँ ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ।।६।।

दोहा– स्वपर प्रकाशक ज्योति अति दीपक तमकरि हीन ।
जासों पूजों परमपद देवशास्त्र गुरु तीन ।।६।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

उद्देश्य– भव्यात्मा अज्ञान/मोहान्धकार को क्षय करने के लिए दीप चढ़ाता है। वह सोचता है हे प्रभो ! यह जड़ दीपक क्षणभंगुर है संसार के थोड़े से अन्धकार को ही नष्ट करने में समर्थ है परन्तु आपका अखण्ड केवलज्ञानरूपी दीपक मेरे समस्त अज्ञानांधकार/मोहान्धकार को क्षय करने में समर्थ है। अत: मोहान्धकार का नाश कर केवलज्ञान ज्योति को अन्तर में प्रकट करने के लिये दीप चढ़ाया जाता है।

प्रश्न २६–धूप चढ़ाने का छंद एवं धूप चढ़ाने का अर्थ बताइये ?

उत्तर– **गीता छन्द**

जो कर्म ईंधन दहन अग्नि समूह सम उद्धत लसै।
वर धूप तासु सुगन्धिताकरि सकल परिमता हँसै ॥
इह भाँति धूप चढ़ाय नित भव ज्वलनमाँहि नहीं पचूँ।
अरहन्त श्रुत सिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥७॥

दोहा– अग्नि माँहि परिमल दहन चन्दनादि गुण लीन।
जासों पूजों परमपद देवशास्त्र गुरु लीन ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० स्वाहा।

उद्देश्य– अष्टकर्मरूपी शत्रुओं को क्षय करने के लिये अग्नि में धूप चढ़ाया जाता है। भक्त सोचता है यद्यपि यह धूप मेरे अष्टकर्मों को नाश नहीं कर सकती है, परन्तु आपकी गुणरूपी धूप ही मेरे कर्म ईंधन को जलाने में समर्थ है। इसलिये जिनगुणरूपी धूप से अष्टकर्मों को जलाने (क्षय करने) के लिए धूप चढ़ायी जाती है।

प्रश्न २७– फल चढ़ाने का छन्द एवं फल चढ़ाने का अर्थ बताइये ?

उत्तर– **गीता छन्द**

लोचन सुरसना घ्रान उर उत्साह के करतार है।
मोपै न उपमा जाय वरणी सकल फल गुण सार है ॥
सो फल चढ़ावत अर्थपूरन परम अमृत रस सचूँ।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु निरग्रन्थ निज पूजा रचूँ ॥८॥

दोहा– जे प्रधान फल फल विषैं पंचकरण रस लीन।
जासों पूजों परम-पद देव शास्त्र गुरु तीन ॥८॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० स्वाहा।

उद्देश्य– संसार के दुखों से भयभीत मानव आकुलता रहित सुख को चाहता है। वह सुख मोक्ष में है। इसलिये भक्त मोक्षफल की प्राप्ति के लिये फल चढ़ाता है। भक्त सोचता है, यद्यपि फल तो अभी सड़ जायेंगे मुझे शाश्वत सुख दे नहीं सकते किन्तु जिनेन्द्रदेव के गुणरूपी फलों की प्राप्ति मुझे करना है अत: मोक्ष फल की प्राप्ति के लिये फल चढ़ाते हैं।

प्रश्न २८– अर्घ्य का छन्द बताते हुए बताइये कि अर्घ्य क्यों चढ़ाया जाता है ?

उत्तर– **गीता छन्द**

जलपरम उज्ज्वल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक धरूँ।
वर धूप निरमल फल विविध बहु जनम के पातक हरूँ ॥
इह भाँति अर्घ चढ़ाय नित भवि करत शिव पंकति मचू।
अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥९॥

दोहा– वसुविधि अर्घ्य संजोयके अति उछाह मन कीन।
जासों पूजों परम-पद देव शास्त्र गुरु तीन ॥९॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ नि० स्वाहा।

उद्देश्य– संसारी जीव जन्म-जरा-मृत्यु से, संसार के आतप से, नश्वर जीवन से, काम एवं क्षुधा की वेदना से, अज्ञान एवं कर्मों से पीड़ित हुआ शाश्वत अखंड सुख की प्राप्ति के लिये अर्घ्य चढ़ाता है।

प्रश्न २९– जयमाला किसे कहते हैं ?

उत्तर– पूज्य पंचपरमेष्ठी एवं नवदेवताओं की अष्टद्रव्य से पूजा के बाद विशेष भक्ति व श्रद्धायुक्त हो गुणों का स्मरण करना, गुणानुवाद करना जयमाला है।

अथवा

पूज्य पुरुषों के गुणों की आरती को जयमाला कहते हैं।

प्रश्न ३०– देव, शास्त्र एवं गुरु का स्वरूप जयमालाके माध्यम से बताइये ?

उत्तर–

दोहा– देवशास्त्र गुरु रतन शुभ तीन रतन करतार ।
भिन्न-भिन्न कहूँ आरती अल्प सुगुणविस्तार ।।

अरहंत का स्वरूप—

कर्मन की त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादश दोषराशि ।
जे परम सुगुण हैं अनंतधीर, कहवत के छ्यालीस गुणगंभीर ।।
शुभ समवसरण शोभा अपार, शत इन्द्र नमतकर शीश धार ।
देवाधिदेव अरहंतदेव, बंदो मन, वच तन करि सुसेव ।।१।।

जिनवाणी का स्वरूप—

जिनकी धुनि है ओंकाररूप निर अक्षरमय महिमा अनूप ।
दश अष्ट महाभाषा समेत लघुभाषा सात शतक सुचेत ।।
सो स्याद्वादमय सप्तभंग गणधर गूँथे बारह सुअंग ।
रवि शशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहुप्रीति ल्याय ।।२।।

गुरु का स्वरूप–

गुरु आचारज उवज्झाय साधु, तन नगन रतनत्रय निधि अगाध ।
संसार-देह वैरागधार, निरवांछि तपैं शिवपद निहार ।।
गुण छंत्तीस पच्चीस आठ बीस भव तारण-तरण जिहाज ईश ।
गुरु की महिमा वरनी न जाय, गुरु नाम जपों मन वचन काय ।।३।।

सोरठा— कीजै शक्ति प्रमान शक्ति बिना सरधा धरै ।
द्यानत सरधावान अजर-अमर पद भोगवे ।।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जयमाला पूर्णार्घं नि० स्वाहा ।

प्रश्न ३१– जयमाला में किसका वर्णन है ?

उत्तर– जयमाला में अरहंत (देव), जिनवाणी और गुरु का वर्णन है ।

प्रश्न ३२– अर्हन्त (देव) कैसे हैं ?

उत्तर– जिन्होंने कर्मों की ६३ प्रकृतियों का नाश कर लिया है जो १८ दोषों से रहित हैं । जो अनंत चतुष्टय गुणों से युक्त एवं छियालीस गुणों से सुशोभित हैं । जिनके समवशरण की शोभा अपूर्व है तथा जो सौ इन्द्रों के द्वारा वंदनीय हैं ऐसे अरहंत देव हैं । जो कि देवाधिदेव हैं । उनको मन, वचन, काय से नमस्कार है ।

प्रश्न ३३– जिनवाणी का स्वरूप जयमाला से बताइये ?

उत्तर– जिनेन्द्रदेव के मुख से खिरी हुई ओंकाररूप वाणी, निरक्षर एवं अनुपम महिमा से युक्त है । जो १८ महा भाषाओं एवं ७०० लघु भाषाओं से युक्त है । गणधर के द्वारा गूँथी गई यह जिनवाणी स्याद्वादमयी एवं सप्तभंग से सुशोभित है । सूर्य और चन्द्रमा भी जिस अंधकार को दूर नहीं कर सकते ऐसे अज्ञानांधकार को हरण करने वाली माता जिनवाणी है ।

प्रश्न ३४– गुरु का स्वरूप जयमाला से बताइये ?

उत्तर– आचार्य, उपाध्याय, साधु जो बाह्य में नग्न हैं एवं रत्नत्रयनिधि के समुद्र हैं । संसार और शरीर में वैराग्य को धारण करने वाले, वांछा रहित होकर तपों को तपते हुए मोक्ष की ओर लक्ष्य बनानेवाले गुरु होते हैं । उनमें आचार्य ३६ मूलगुण के धारक एवं उपाध्याय २५ और साधु २८ मूलगुण के धारी होते हैं । ये गुरु भव समुद्र से तिराने वाले जहाज के समान है । ऐसे दिगम्बर निर्ग्रन्थ गुरुओं की महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता है । मन, वचन, काय से दिगम्बर गुरुओं को नमस्कार कर उनका ध्यान करना चाहिये ।

प्रश्न ३५– शान्ति पाठ बताते हुए बताइये इसे बोलते समय क्या करना चाहिये ?

(शांति पाठ बोलते समय दोनों हाथों से पुष्प क्षेपण करना चाहिए ।)

शान्तिपाठ

उत्तर–

शान्तिनाथ मुख शशि उनहारी शीलगुणव्रतसंयमधारी ।
लखन एक सौ आठ विराजै निरखत नयन कमल दल लाजै ।।
पंचम चक्रवर्ती पदधारी सोलम तीर्थंकर सुखकारी ।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिननायक नमो शांतिजिन शांति विधायक ।
दिव्य विटप पहुपनकी वरषा दुन्दुभि आसन वाणी सरसा ।
छत्र चमर भामण्डल भारी ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ।।

शान्ति जिनेश शान्ति सुखदाई जगत्पूज्य पूजौं शिरनाई ।
परमशांति दीजै हम सबको पढ़ै जिन्हें पुनि चार संघ को ।।

वसंततिलका

पूजैं जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके,
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके ।
सो शान्तिनाथ वरवंश जगत्प्रदीप,
मेरे लिए करहिं शांति सदा अनूप ।।

इन्द्रवज्रा

संपूजकों को प्रतिपालकों को यतीनकों को यतिनायकों को ।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले कीजे सुखी हे जिन शांतिको दे ।।

स्त्रग्धरा छन्द

होवै सारी प्रजा को सुख बलयुत हो धर्मधारी नरेशा ।
होवै वर्षा समै पै तिलभर न रहै व्याधियों का अंदेशा ।।
होवै चोरी न जारी सुसमय वरतै हो न दुष्काल भारी ।
सारे ही देश धारैं जिनवर वृषको जो सदा सौख्यकारी ।।

दोहा– घातिकर्म जिन नाशकरि, पायो केवलराज ।
शांति करो सब जगत में, वृषभादिक जिनराज ।।
(इसके बाद तीन बार जलधारा छोड़नी चाहिये ।)
(दोनों हाथों को जोड़कर प्रार्थना करें—)
शास्त्रों का हो पठन सुखदा लाभ सत्संगती का,
सद्वृत्तों का सुजस कहके दोष ढाकूँ सभी का ।
बोलूँ प्यारे वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ,
तौलौं सेऊँ चरण जिनके मोक्ष जोलौं न पाऊँ ।।

आर्या छन्द

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में ।
तबलों लीन रहौं प्रभु, जबलौं पाया न मुक्तिपद मैंने ।।
अक्षर पद मात्रा से दूषित जो कुछ कहा गया मुझ से ।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुड़ाहु भव दुख से ।।

हे जगबंधु जिनेश्वर, पाऊँ तव चरण शरण बलिहारी ।
मरण समाधि सुदुर्लभ कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी ।।

प्रश्न ३६– स्थापना के पुष्पों का क्या करना चाहिये ?

उत्तर– स्थापना के पुष्पों को मस्तक पर लगाकर चढ़ी हुई सामग्री में मिला देना चाहिये । उन्हें जलाना या कुएँ में विसर्जन आदि नहीं करना चाहिये । जिनकी यह मान्यता है कि ठोने में भगवान आये हैं तथा अब उनको वापिस भेजकर पुष्पों को अग्नि में क्षेपण करना युक्त मानते हैं यह अनुचित परम्परा है । भगवान तो कभी आते ही नहीं, भक्त तो उन्हें अपने हृदय में आह्वानन करता हुआ पुष्पों का क्षेपण आनन्दरूपेण करता है अत: पुष्प मात्र शिरोधार्य कर अन्य सामग्री में मिला देना चाहिये ।

प्रश्न ३७– विसर्जन पाठ बोलिये ?

उत्तर– बिन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय ।
तुम प्रसादतैं परम गुरु, सो सब पूरन होय ।।१।।
पूजन विधि जानूँ नहीं, नहीं जानूँ आह्वान ।
और विसर्जन हूँ नहीं, क्षमा करहु भगवान् ।।२।।
मन्त्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव ।
क्षमा करहु राखहुँ मुझे, देहु चरण की सेव ।।३।।
आये जो जो देवगण, पूजैं भक्ति प्रमान ।
ते सब जावहु कृपाकर, अपने-अपने थान ।।४।।

प्रश्न ३८–इस प्रकार पूजा के पश्चात् क्या करना चाहिए ?

उत्तर– पूजा के पश्चात् पूजक का मन जिनचरणों से इतना निर्मल हो जाता है कि वह ध्यान करता है कि हे प्रभो ! जिस प्रकार पारसमणी का स्पर्श करके लोहा भी सोना बन जाता है, धनिक की सेवा करके निर्धन धनवान बन जाता है फिर हे प्रभो ! मैं भी आपकी भक्ति के प्रसाद से आपके समान बन जाता हूँ तो कोई आश्चर्य नहीं है । इसलिए मैं अब आपका दास नहीं हूँ ।

दासोऽहं से पूजक सोऽहं पर पहुँचता है । सोऽहं सोऽहं जाप्य या चिन्तन से जो आप हैं वहीं मैं हूँ, इस प्रकार अधिक विशुद्धता बढ़ने पर फिर विचारता है अरे ! प्रभु का अनन्त चतुष्टय प्रभु में है और मेरा अनन्त चतुष्टय मुझ में है । मैं, मैं रूप हूँ, पर,पर रूप है । अत: सोऽहं से आगे पूजक ''अहं'' की स्थिति पर पहुँच जाता है । यही वास्तविक पूजा है । 'जिनेन्द्र देव की सच्ची पूजा, पूजक को पूज्य बना देती है ।

प्रश्न ३९– पूजा का फल बताइये, उदाहरण देकर समझाइये ?

उत्तर– जिन पूजा से पूजक स्वयं पूज्य बनता है । जिनेन्द्र भक्त भव्यात्मा पूजा के फल से इन्द्र के ऐश्वर्य को प्राप्त करता है एवं मुकुटबद्ध राजाओं के द्वारा पूज्य चक्रवर्ती के पद को प्राप्त कर त्रैलोक्य पूज्य तीर्थङ्कर पद को प्राप्त करके पूज्य तीर्थङ्कर पद को प्राप्त करता है ।

पूजा की भावना से एक मेंढक भी देव हो गया ।

मेंढक की कथा—राजगृह नगरी में एक सेठ रहता था । उसकी भवदत्ता नाम की सेठानी थी । आर्त्तध्यान से मर कर सेठ अपनी आँगन की बावड़ी में मेंढक हो गया । एक दिन भवदत्ता पानी लाने के लिए बावड़ी पर गई । उसको देखकर मेंढक को जाति स्मरण हो गया । उसी समय पूर्व संस्कारवश वह भवदत्ता के शरीर पर चढ़ गया । बार-बार दूर करने पर भी वह हटता नहीं था । एक दिन वह अवधिज्ञानी मुनिराज से यह जानकर कि यह तुम्हारे पति का जीव है, जो आर्त्तध्यान से मेंढक हुआ है । भवदत्ता ने उसे अपने घर में रख लिया । एक दिन वनपाल ने राजा श्रेणिक से कहा आपके नगर में वर्द्धमान प्रभु का समवशरण आया है, सभी हर्ष से प्रभु के दर्शन को जा रहे थे । श्रेणिक भी अपने हाथी पर

सवार हो प्रभु दर्शन को चल दिये । यह देखकर मेंढक भी प्रभु-भक्ति पूजा की भावना से मुख में कमल पाँखुड़ी लेकर भगवान की पूजा के लिये जा रहा था । जनसमूह की भीड़ बहुत थी । वह मेंढक राजा श्रेणिक के हाथी के पाँव तले दबकर मर गया । प्रभु-पूजा की भावना से मरकर देव हुआ और श्रेणिक से पहले प्रभु महावीर के समवशरण में जाकर भक्ति-गान करने लगा ।

जब एक मेंढक भी पूजा की भावना के फल से देव पर्याय को प्राप्त हो गया तो क्या जो भव्यात्मा नित्य भगवान की अष्टद्रव्य से श्रद्धा-भक्ति पूर्वक पूजा करते हैं वे मोक्षलक्ष्मी को नहीं पा सकेंगे ? अवश्य पायेंगे ।

प्रश्न ४०– मेंढक ने एक द्रव्य से पूजा की हम (मनुष्य) भी एक द्रव्य से पूजा कर सकते हैं क्या ?

उत्तर– मेंढक तिर्यञ्च था उसके लिए अष्टद्रव्य से पूजा करना शक्य नहीं था अत: एक द्रव्य से पूजा करना भी योग्य था किन्तु मनुष्यों की अष्ट द्रव्यों से ही पूजा करनी चाहिये । हाँ, परिस्थितिवश वह एक दो आदि द्रव्यों से भी शक्ति अनुसार कर सकता है । परन्तु समर्थ होने पर श्रावक को शुद्ध अष्टद्रव्यों से ही पूजा करना चाहिये । अन्यथा पशु और मनुष्य में कोई अन्तर नहीं रहेगा ।

•

५-नैष्ठिक श्रावक

प्रश्न ४१- नैष्ठिक श्रावक किसे कहते हैं ?

उत्तर- देशसंयम का घात करने वाली कषायों के क्षयोपशम की तारतम्यता के वश से दार्शनिक आदि ११ श्रावक सम्बन्धी संयम स्थानों के वशीभूत तथा उत्तम लेश्या वाला नैष्ठिक श्रावक कहलाता है। श्रावक के ११ संयम स्थानों को ११ प्रतिमा भी कहते हैं।

प्रश्न ४२- प्रतिमा किसे कहते हैं ?

उत्तर- संयम अंश जग्यो जहाँ भोग अरुचि परिणाम।
उदय प्रतिज्ञा को भयो, प्रतिमा ताको नाम॥
भोगों के प्रति जब अरुचि जागृत होती है तब संयम अंश जागृत होता है तभी प्रतिज्ञा लेने की भावना उत्पन्न होती है। प्रतिज्ञा लेना ही प्रतिमा है।

प्रश्न ४३- ग्यारह प्रतिमाओं के नाम बताइये ?

उत्तर- १-दार्शनिक प्रतिमा २-व्रतिक प्रतिमा ३-सामायिक प्रतिमा ४-प्रोषध प्रतिमा ५-सचित्तत्याग प्रतिमा ६-रात्रिभुक्तित्याग प्रतिमा ७-ब्रह्मचर्य प्रतिमा ८-आरम्भत्याग प्रतिमा ९-परिग्रहत्याग प्रतिमा १०-अनुमतित्याग प्रतिमा ११-उद्दिष्टत्याग प्रतिमा।

प्रश्न ४४- दार्शनिक प्रतिमा का स्वरूप बताइये ?

उत्तर- २५ दोष रहित सम्यग्दर्शन का धारक, संसार शरीर और भोगों से विरक्त, पञ्चपरमेष्ठी का ध्यान करने वाला और अष्टमूलगुणों का धारक जीव दर्शन प्रतिमा का धारी होता है।

प्रश्न ४५- व्रत प्रतिमाधारी का स्वरूप लिखिये ?

उत्तर- जो माया, मिथ्या, निदान इन तीन शल्यों से रहित होता हुआ अतिचार रहित ५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत और ४ शिक्षाव्रतों का पालन करता है उसको व्रत प्रतिमाधारी कहते हैं।

प्रश्न ४६- माया, मिथ्या, निदान तीन शल्यों का स्वरूप लिखिये तथा इन्हें शल्य क्यों कहते हैं बताइये ?

उत्तर- **माया**—दूसरों को ठगना।
मिथ्यात्व—अतत्त्व श्रद्धान अर्थात् विपरीताभिनिवेश।
निदान—संसार के भोगों की इच्छा।
जो शरीर में प्रवेश किये हुए काँटे आदि शल्य के समान निरन्तर शरीर व मन के सन्ताप में कारण हो उसको शल्य कहते हैं। माया, मिथ्या, निदान जिस आत्मा में प्रवेश कर जाते हैं उसके अन्दर काँटे की तरह सन्ताप उत्पन्न करते हैं, इसीलिये इन्हें शल्य कहा है।

प्रश्न ४७- अणुव्रत का स्वरूप एवं भेद बताइये ?

उत्तर- स्थूल हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील एवं परिग्रह इन पाँच पापों का एकदेश त्याग अणुव्रत कहलाता है। वे इस प्रकार हैं—१-अहिंसाणुव्रत २-सत्याणुव्रत ३-अचौर्याणुव्रत ४-ब्रह्मचर्याणुव्रत ५-परिग्रहपरिमाणाणुव्रत।

प्रश्न ४८- अहिंसाणुव्रत का स्वरूप बताइये ?

उत्तर- मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदना से संकल्पपूर्वक त्रस जीवों का घात नहीं करना अहिंसाणुव्रत है। जैसे—

१- हिंसा करूँ ऐसा विचार मन में स्वयं नहीं करना।
२- मारो-मारो इस प्रकार मनसे प्रेरणा भी नहीं करना।
३- इसने हिंसा की यह अच्छा किया ऐसा मनमें विचार नहीं करना।
४- मारता हूँ ऐसा वचन स्वयं नहीं कहना।
५- मारो-मारो ऐसा वचन मुख से नहीं कहना।
६- इसने हिंसा की, यह अच्छा किया ऐसा वचन मुख से नहीं कहना।
७- अपने शरीर से स्वयं हिंसा करना।
८- मुक्की आदि से शरीर के द्वारा हिंसा नहीं करना।
९- हिंसा करते हुए को नेत्र आदि के इशारे से, चुटकी आदि से प्रेरणा नहीं करना।

प्रश्न ४९– सत्याणुव्रत का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– जिसमें स्थूल झूठ को न तो आप बोलता है, न दूसरों से बुलवाता है और न ही दूसरों को आपत्ति के लिये सच भी स्वयं बोलता है, न दूसरों से बुलवाता है उसे सत्याणुव्रत कहते हैं। अर्थात् जिस वचन के बोलने पर राजा आदि से दंड मिलता है। स्वयं या दूसरे किसी का वध होता है ऐसा स्थूल झूठ स्वयं न बोलना, न दूसरों से बुलवाना सत्याणुव्रत है।

प्रश्न ५०– अचौर्याणुव्रत का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– जो व्रती श्रावक किसी की रखी हुई, गिरी हुई, भूली हुई वस्तु को बिना दी हुई नहीं लेता है और नहीं देता है उसकी वह क्रिया अचौर्याणुव्रत है।

प्रश्न ५१– ब्रह्मचर्याणुव्रत का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– जो पाप के डर से पर स्त्री को न तो स्वयं भोगता है और न दूसरों को भुगवाता है। उसकी यह क्रिया परस्त्रीत्याग अथवा स्वरदारसन्तोष नामक अणुव्रत है।

प्रश्न ५२– परिग्रहपरिमाणाणुव्रत का लक्षण बताइये ?

उत्तर– क्षेत्र, वास्तु, हिरण्य, सुवर्ण, धन, धान्य, दासी, दास, कुप्य, भांड इन दशों परिग्रहों को परिमित रखकर उससे अधिक में इच्छा नहीं रखना इच्छापरिमित नामक परिग्रहपरिमाणाणुव्रत है।

प्रश्न ५३– पाँच अणुव्रतों में प्रसिद्ध मनुष्यों के नाम बताइये ?

उत्तर– १-अहिंसाणुव्रत में—यमपाल चाण्डाल २-सत्याणुव्रत में—धनदेव सेठ ३-अचौर्याणुव्रत में—श्रेणिक पुत्र वारिषेण ४-ब्रह्मचर्याणुव्रत में—एक वैश्य की पुत्री नीली और ५-परिग्रहपरिमाणाणुव्रत में—राजपुत्र जयकुमार विशेष प्रसिद्ध हुए।

प्रश्न ५४– गुणव्रत का स्वरूप एवं भेद बताइये ?

उत्तर– जो अष्टमूलगुणों में गुण वृद्धि या दृढ़ता करते हैं उनको गुणव्रत कहते हैं। ये गुणव्रत तीन हैं—१-दिग्व्रत २-अनर्थदंडव्रत ३-भोगोपभोगपरिमाण व्रत।

प्रश्न ५५– दिग्व्रत का लक्षण बताइये ?

उत्तर– सूक्ष्म पापों से भी मुक्त होने के लिये दसों दिशाओं को सीमित करके इससे बाहर जीवनपर्यन्त नहीं जाऊँगा। इस प्रकार संकल्प या प्रतिज्ञाकरना दिग्व्रत है।

प्रश्न ५६– अनर्थदण्डव्रत का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– दसों दिशाओं की मर्यादा के भीतर प्रयोजन रहित पापबंध के कारण, मन, वचन, काय की प्रवृत्तियों से विरक्त होने को अनर्थदण्डव्रत कहते हैं।

प्रश्न ५७–अनर्थदण्ड के भेद बताइये ?

उत्तर– अनर्थदण्ड के ५ भेद हैं—१-पापोपदेश २-हिंसादान ३-अपध्यान ४-दुःश्रुति ५-प्रमादचर्या।

१-पापोपदेश—तिर्यञ्चों का व्यापार हिंसा आरम्भ छल आदि की कथाओं का बार-बार उपदेश देना।

२-हिंसादान—हिंसा के कारणभूत तलवारं, फरसा, कुदारी, फावड़ा, छुरी, कटार आदि वस्तुओं का दान देना।

३-अपध्यान—द्वेष और राग से अन्य की स्त्री, धन आदि के नाश होने, बँध जाने, कट जाने आदि के चिन्तवन को अपध्यान कहते हैं।

४-दुःश्रुति—आरम्भ परिग्रह, साहस, मिथ्यात्व, द्वेषादि बढ़ाने वाले शास्त्रों का सुनना।

५-प्रमादचर्या—बिना प्रयोजन जमीन खोदना, जल गिराना, अग्नि जलाना, वनस्पति तोड़ना, घूमना-फिरना आदि सब प्रमादचर्या नामक अनर्थदंड हैं।

प्रश्न ५८ –भोगोपभोगपरिमाण गुणव्रत का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– राग से होने वाली आसक्ति को घटाने के लिये परिग्रहपरिमाण के भीतर नित्य काम आने वाले इन्द्रिय विषयों का नियत समय या जीवनपर्यन्त के लिये परिमाण करना भोगोपभोगपरिमाण व्रत है।

प्रश्न ५९– भोग और उपभोग का लक्षण बताइये ?

उत्तर– जो पदार्थ एक बार भोगने के बाद भोगने योग्य नहीं रहता है वह भोग है । जैसे—भोजन, गंध, माला आदि । जो पदार्थ बार-बार भोगने में आता है उसे उपभोग कहते हैं । जैसे—वस्त्र, आभूषण आदि ।

प्रश्न ६०– शिक्षाव्रत का लक्षण एवं भेद बताइये ?

उत्तर– जिन व्रतों से मुनि बनने की अर्थात् महाव्रत पालने की शिक्षा मिले उसे शिक्षाव्रत कहते हैं । शिक्षाव्रत के चार भेद हैं—

१-देशावकाशिक २-सामायिक ३-प्रोषधोपवास ४-वैय्यावृत्य ।

प्रश्न ६१– देशावकाशिक शिक्षाव्रत का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– दिग्व्रत में जो जीवनपर्यन्त के लिये आवागमन के क्षेत्रादि की बड़ी मर्यादा की थी उसमें भी काल के विभाग से कमी करना देशावकाशिक व्रत है । इसी को देशव्रत भी कहते हैं । जैसे—मैं प्रसिद्ध गली, घर, मकान आदि से बाहर नहीं जाऊँगा आदि ।

प्रश्न ६२– सामायिक शिक्षाव्रत का लक्षण बताइये ?

उत्तर– दिग्व्रत तथा देशव्रत की मर्यादा के भीतर और बाहर सब जगह सामायिक के लिए निश्चित समय में पाँचों पापों का मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदना से त्याग करना सामायिक नामक शिक्षाव्रत है ।

प्रश्न ६३– सामायिक के समय क्या विचार करना चाहिये ?

उत्तर– भव्यात्मा सामायिक में विचार करें कि यह संसार अशरण है, अशुभ है, अनित्य है, दु:खदायक और पररूप है । मोक्ष इसका उल्टा अर्थात् शरण है, शुभ है, नित्य है, सुखमय है और आत्मरूप है । इसलिए यह मोक्ष ही मुझे उपादेय है । मैं एक हूँ, अखंड हूँ, अविनाशी हूँ, मेरी आत्मा ही मुझे उपादेय है ।

प्रश्न ६४– प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत का लक्षण बताइये ?

उत्तर– प्रत्येक माह की पर्व तिथियों (अष्टमी, चतुर्दशी) को व्रत धारण की इच्छा से खाद्य (रोटी, दाल, भात आदि), स्वाद्य (लाडू, पेड़ा, बरफी आदि), लेह्य (रबड़ी, चटनी, आमरस आदि), पेय (दूध, पानी, छाछ आदि) चार प्रकार के आहार का त्याग करना प्रोषधोपवास शिक्षाव्रत है ।

प्रश्न ६५– उपवास का अर्थ क्या है ? उपवास के दिन क्या कार्य नहीं करना चाहिये ?

उत्तर– उप याने समीप, वास याने रहना=आत्मा के समीप रहना उपवास है । उपवास के दिन अशुभ कार्य नहीं करना चाहिये । उपवास के दिन हिंसादि पाँच पापों का त्याग, आरंभ त्याग, शृंगारादि तेल, इत्र, माला, स्नान, अंजन लगाने का त्याग करना चाहिये । सिनेमा देखना, शतरंज, ताश,केरम आदि खेलने का उपवास के दिन त्याग करना चाहिये ।

(जिनेन्द्र देव की पूजा, दान के लिये स्नान करना निषेध नहीं है)

प्रश्न ६६– उपवास के दिन क्या करना चाहिये ?

उत्तर– उपवास के दिन जिनाभिषेक, पूजा, पाठ आदि करते हुए आलस्य रहित होकर जिनवाणी अमृत का पान स्वयं भी करना, दूसरों को भी कराना चाहिये । तथा भक्ति, पठन, पाठन, ध्यानादि शुभ कार्यों में समय बिताना चाहिये ।

प्रश्न ६७– वैयावृत्य का लक्षण बताइये ?

उत्तर– (१) गुणों के निधान गृहत्यागी मुनि, आर्यिका, क्षुल्लक, क्षुल्लिका के लिये बिना किसी फल की इच्छा से यथाशक्ति दान देना वैय्यावृत्य नामक शिक्षाव्रत है ।

(२) गुणानुरागी भव्यात्मा के द्वारा व्रतीजनों के उपसर्गादि दूर करना, औषधादि देना, मार्गजन्य थकावट को दूर

करना, पैर आदि दबाना, चार प्रकार के (आहार, औषध, शास्त्र, अभय) दान देना, उनका उपचार करना ये सब वैय्यावृत्य शिक्षाव्रत कहलाता है ।

प्रश्न ६८– सामायिक प्रतिमाधारी का लक्षण बताइये ?

उत्तर– चारों दिशाओं में तीन-तीन कुल १२ आवर्त और १-१ कुल ४ प्रणाम करके बाह्य और आभ्यंतर परिग्रह रहित मुनि के समान खड्गासन या पद्मासन से मन, वचन, काय को शुद्ध रखकर सुबह, दोपहर और शाम के समय सामायिक करने वाला व्यक्ति सामायिक प्रतिमाधारी कहलाता है ।

प्रश्न ६९– चौथी प्रोषध प्रतिमाधारी का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– प्रत्येक माह की दोनों अष्टमी और चतुर्दशी के दिनों में अपनी शक्ति के अनुसार उत्तम, मध्यम, जघन्य रीति से विधिपूर्वक प्रोषधोपवास करने वाला प्रोषध प्रतिमाधारी कहलाता है ।

प्रश्न ७०– सचित्त त्याग प्रतिमाधारी का लक्षण बताइये ?

उत्तर– जो दयालु भव्यात्मा अपक्व, कच्चे, मूल, अशुष्क, सचित्त, जड़, फल, शाक, डाली, कोंपल, जमीकंद, मूल और बीज नहीं खाता है वह पानी भी गरम, प्रासुक करके ही पीता है । वह सचित्तत्याग प्रतिमाधारी है ।

प्रश्न ७१– रात्रिभुक्ति त्याग प्रतिमाधारी का लक्षण बताइये ?

उत्तर– जो दयालु व्रती श्रावक रात्रि में दाल-भात, रबड़ी, दूध, पेड़ा, पानी आदि चार प्रकार का आहार स्वयं नहीं करता है और दूसरों को भी नहीं कराता है उसे रात्रिभुक्तित्याग प्रतिमाधारी कहते हैं । इसे दिवामैथुनत्यागी भी कहते हैं ।

प्रश्न ७२– ब्रह्मचर्य प्रतिमाधारी का लक्षण बताइये ?

उत्तर– जो व्रती श्रावक शरीर को रजोवीर्य से उत्पन्न अपवित्रता का कारण मल-मूत्र से दुर्गन्ध ग्लानि युक्त, हाड़, मांस का पिंजरा जानकर कामसेवन का हमेशा त्याग कर शरीर से ममत्व छोड़ कर आत्मस्वभाव में लीन होता है, वह ब्रह्मचर्य प्रतिमाधारी कहलाता है ।

प्रश्न ७३– आरम्भ त्याग प्रतिमा का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– जो जीव हिंसा के कारणभूत नौकरी, खेती, व्यापार आदि आरम्भ के कार्यों से विरक्त होता है वह आरम्भत्याग प्रतिमाधारी कहलाता है । (जिनपूजा और आहार दानादि शुभ कार्य करने का निषेध नहीं है)

प्रश्न ७४– परिग्रहत्याग प्रतिमाधारी का लक्षण बताइये ?

उत्तर– जो मनुष्य बाह्य में दस प्रकार के परिग्रहों से तथा अंतरंग में चौदह प्रकार के परिग्रहों से सर्वथा ममता को छोड़कर निर्मोही होकर परिग्रह का त्याग करता है वह परिग्रहत्याग प्रतिमाधारी कहलाता है ।

प्रश्न ७५– बाह्य और अभ्यंतर परिग्रहों के भेद बताइये ?

उत्तर– बाह्य परिग्रह १० प्रकार के हैं—१-क्षेत्र २-वास्तु ३-हिरण्य ४-सुवर्ण ५-धन ६-धान्य ७-दासी ८-दास ९-कुप्प १०-भांड ।

अभ्यंतर परिग्रह १४ प्रकार का है—१-मिथ्यात्व २-क्रोध ३-मान ४-माया ५-लोभ ६-हास्य ७-रति ८-अरति ९-शोक १०-भय ११-जुगुप्सा १२-स्त्रीवेद १३-पुरुषवेद १४-नपुंसकवेद ।

प्रश्न ७६– अनुमति त्याग प्रतिमाधारी का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– जो किसी भी पाप कार्य, खेती आदि आरम्भ कार्य, धनादि परिग्रह एवं विवाह आदिक इस लोक सम्बन्धी कार्य में अनुमति नहीं देता है वह अनुमतित्याग प्रतिमाधारी कहलाता है ।

प्रश्न ७७– उद्दिष्टत्याग प्रतिमाधारी का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– जो व्यक्ति भव्यात्मा घर छोड़कर मुनियों के पास जाकर व्रतों को धारण करता है, तपों को तपता है, भिक्षा से भोजन करता है एवं लंगोटी और खण्डवस्त्र धारण करता है वह उद्दिष्टत्याग प्रतिमाधारी कहलाता है ।

ऐलक—सिर्फ लंगोट रखते हैं ।

क्षुल्लक—लंगोट और एक चादर (खंडवस्त्र) रखते हैं ।

क्षुल्लिका—क्षुल्लिका के पास एक सोलह हाथ की साड़ी और ऊपरी एक चादर रहती है । ये पात्र में भोजन करती हैं तथा पिच्छी और धातु का कमंडलु इनके हाथ में रहता है ।

प्रश्न ७८– श्रावक के ११ प्रतिमाओं के पालने का फल क्या है ?

उत्तर– जो श्रावक के ११ प्रतिमाओं के व्रतों का निरतिचारपालन करता है वह १६वें स्वर्ग में जाकर देव पद पाता है एवं सात-आठ भवों में मुक्ति पद को प्राप्त करता है ।

प्रश्न ७९– ऐलक, क्षुल्लक व क्षुल्लिका को नमस्कार करते समय क्या बोलना चाहिये ? तथा व्रती श्रावक को क्या बोलना चाहिये ?

उत्तर– ऐलक, क्षुल्लक व क्षुल्लिका को नमस्कार करते समय 'इच्छामि' कहना चाहिये । प्रतिमाधारी, जघन्य और मध्यम श्रावक को वन्दना कहकर हाथ जोड़ना चाहिये ।

●

६–मुनिचर्या

प्रश्न ८०– मुनि किसे कहते हैं उनके कौन-कौन से व्रत होते हैं ?

उत्तर– जो मौन रहते हैं (आत्मा में लीन रहते हैं) २८ मूलगुणों का पालन करते हैं उन्हें मुनि कहते हैं । मुनियों के ५ महाव्रत ५ समितियाँ, ५ इन्द्रियों का विजय एवं ६ आवश्यक तथा इनके अलावा ७ गुण और होते हैं (देखिये भाग २ में)

प्रश्न ८१– महाव्रत किसे कहते हैं ? वे कितने हैं ?

उत्तर– अहिंसा आदि व्रतों का पूर्ण रूप से पालन महाव्रत कहलाता है । ये पाँच हैं—१-अहिंसा महाव्रत २-सत्य महाव्रत ३-अचौर्य महाव्रत ४-ब्रह्मचर्य महाव्रत ५-परिग्रहत्याग महाव्रत ।

प्रश्न ८२– अहिंसा महाव्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर– छह काय (पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय एवं त्रसकाय) के जीवों की विराधना नहीं करना एवं रागद्वेषादि विकारी भावों को नहीं करना यह अहिंसा महाव्रत है ।

प्रश्न ८३– सत्य महाव्रत एवं अचौर्य महाव्रत का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– स्थूल एवं सूक्ष्म दोनों प्रकार के झूठ को बोलने का पूर्ण त्याग करने को सत्य महाव्रत कहते हैं । एवं
किसी की भी कोई भी वस्तु, पानी और मिट्टी भी बिना दिये नहीं लेना यह अचौर्य महाव्रत है ।

प्रश्न ८४– ब्रह्मचर्य एवं परिग्रहत्याग महाव्रत का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– शील के अठारह हजार भेदों का पालन कर, स्त्री मात्र का त्याग कर सदा आत्मा का अनुभव करना ब्रह्मचर्य महाव्रत है । अंतरंग १४ प्रकार—मिथ्यात्व, क्रोध,

मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद एवं बहिरंग १० प्रकार—क्षेत्र, वास्तु, हिरण्य, सुवर्ण, धन, धान्य, दासी, दास, कुप्य और भाँड परिग्रह का पूर्ण त्याग परिग्रहत्याग महाव्रत है ।

प्रश्न ८५– समिति किसे कहते हैं ? वे कौनसी हैं ?

उत्तर– प्राणियों की रक्षा के लिये सम्यक् प्रकार से प्रवृत्ति करना समिति है । समिति ५ होती हैं—१-ईर्या समिति २-भाषा समिति ३-एषणा समिति ४-आदाननिक्षेपण समिति ५-प्रतिष्ठापन समिति ।

प्रश्न ८६– पाँचों समितियों का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– ईर्या समिति—प्रमाद छोड़कर चार हाथ आगे जमीन देख कर चलना ईर्या समिति है ।

भाषा समिति—सब जीवों के हितकारी, अहित को दूर करने वाले, कानों को सुखकारी, सन्देह एवं मिथ्यात्व के नाशक, चन्द्रमा से अमृत के समान वाणी को बोलना भाषा समिति है ।

एषणा समिति—छ्यालीस दोषों को टालकर, कुलीन श्रावक के घर जाकर, तप की वृद्धि के लिये, शरीर की पुष्टि एवं जिह्वा की लोलुपता के बिना सरस, नीरस आहार लेना एषणा समिति है ।

आदाननिक्षेपण समिति—पवित्रता के उपकरण कमण्डलु, ज्ञान के उपकरण शास्त्र एवं संयम के उपकरण पिच्छी को देखकर उठाना और धरना आदाननिक्षेपण समिति है ।

प्रतिष्ठापन समिति–शरीर के मलमूत्र और खकार आदि को जीव रहित स्थान देखकर छोड़ना प्रतिष्ठापन समिति है ।

प्रश्न ८७– गुप्ति किसे कहते हैं ? वे कितनी और कौन सी हैं ?

उत्तर– मन, वचन,काय की स्वच्छंद प्रवृत्ति को रोकना गुप्ति है । गुप्ति तीन होती है—१-मन गुप्ति २-वचन गुप्ति ३-काय गुप्ति ।

प्रश्न ८८– पंचेन्द्रिय जय किसे कहते हैं ?

उत्तर– पाँचों इन्द्रियों (स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, कर्ण) के शुभ-अशुभ स्पर्श, रस, गंध, रूप और शब्द में राग-द्वेष नहीं करना पंचेन्द्रिय जय कहलाता है ।

प्रश्न ८९– आवश्यक किसे कहते हैं ? वे कितने और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर– अवश्य करने योग्य क्रिया को आवश्यक कहते हैं । मुनियों के ये आवश्यक ६ होते हैं—१-समता २-वन्दना ३-स्तुति ४-स्वाध्याय ५-प्रतिक्रमण ६-कायोत्सर्ग ।

समता—हमेशा राग-द्वेष से रहित होकर सामायिक में लीन रहना समता भाव है ।

वन्दना—व्यक्तिगत किसी एक तीर्थंकर आदि का स्तवन करने को वन्दना कहते हैं ।

स्तुति—सामूहिक रूप से २४ तीर्थंकर, पंचपरमेष्ठी का स्तवन करने को स्तुति कहते हैं ।

स्वाध्याय—जिनेन्द्र कथित शास्त्रों का अध्ययन स्वाध्याय है ।

प्रतिक्रमण—पूर्व में लगे दोषों का पश्चात्ताप प्रतिक्रमण कहलाता है ।

कायोत्सर्ग—शरीर से ममत्व का त्याग कायोत्सर्ग है ।

प्रश्न ९०– सात शेष गुणों का वर्णन कीजिये ?

उत्तर– १-मुनिराज स्नान नहीं करते हैं ।
२-दांतोन नहीं करते हैं ।
३-शरीर पर थोड़ा भी वस्त्र नहीं पहिनते हैं ।
४-जमीन पर रात्रि के पिछले भाग में एक करवट से थोड़ी नींद लेते हैं ।

५-दिन में एक बार आहार लेते हैं ।
६-खड़े-खड़े करपात्र (हाथों) में अल्प आहार लेते हैं ।
७-केशलोंच करते हैं (बालों को अपने हाथों से निकालना)

प्रश्न ९१– आर्यिका का स्वरूप बताइये ?

उत्तर– आर्यिका श्राविका नहीं है अपितु वह भी उपचार से महाव्रती हैं । ये सोलह हाथ की साड़ी पहनती हैं । ये बैठकर हाथ में एक समय शुद्ध भोजन करती हैं तथा पिच्छी और काठ का कमंडलु रखती हैं । केशों का लोंच करती हैं । इनकी सारी चर्या मुनियों के समान होती है ।

प्रश्न ९२– मुनिराज व आर्यिकाओं की नमस्कार विधि बताइये ?

उत्तर– श्रावक मुनिराज की वन्दना पञ्चांग व अष्टांग से करें । श्राविकाएँ सदैव गवासन से नमस्कार करें । मुनिराज को नमस्कार करते समय ''नमोस्तु'' और आर्यिकाओं के लिये ''वन्दामि'' शब्दोच्चारण करें ।

प्रश्न ९३– २८ मूलगुणों के धारी महाव्रती मुनिराजों का चरित्र कौन सा चारित्र कहलाता है ?

उत्तर– निष्परिग्रही, वात्सल्यमूर्ति, स्वपरोपकारी, ज्ञानध्यान तपस्या में निरत दिगम्बर मुनिराजों के (महाव्रत) आचरण को संयमाचरण चारित्र कहते हैं ।

प्रश्न ९४– स्वरूपाचरण चारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर– (१) जिससे अपने आत्मा का ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्यादि संपत्ति प्रकट हो जाती है और पर वस्तुओं से सब प्रकार की प्रवृत्ति हट जाती है उसे स्वरूपाचरण चारित्र कहते हैं ।

(२) जब मुनि भेद विज्ञानरूपी तेज छैनी से अन्तरंग का परदा भेदकर रागादि भावों से आत्मा को जुदा करके आत्मा में आत्महित के लिये आत्मा के द्वारा अपने को जान लेते हैं । तब गुण-गुणी, ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय के सब विकल्प मिट जाते हैं । उनका वह चारित्र स्वरूपाचरण चारित्र कहलाता है ।

(३) जहाँ आत्मध्यान की अवस्था में ध्यान, ध्याता, ध्येय का भेद नहीं रहता है और जहाँ शुद्धोपयोग

की स्थिर अवस्था प्रकट हो जाती है उसे स्वरूपाचरण चारित्र कहते हैं ।

प्रश्न ९५– स्वरूपाचरण चारित्र की महिमा का वर्णन कीजिये ?

उत्तर– जो मुनि स्वरूपाचरण में स्थिर हो जाते हैं उन्हें आत्मा अनंत चतुष्टय रूप दिखलाई देता है । उसमें कोई रागादि भाव दिखाई नहीं देते हैं । ऐसे महामुनि पापों का क्षय करके अरहंत, सिद्ध अवस्था को प्राप्त करके सदा के लिये मोक्ष में विराजमान होकर सदा के लिये सुखी हो जाते हैं ।

•

७–जैनदर्शन के मुख्य सिद्धान्त

प्रश्न ९६– वस्तु तत्त्व का निर्णय किससे होता है ?

उत्तर– वस्तु तत्त्व का निर्णय प्रमाण और नय से होता है ।

प्रमाण—(१) जो वस्तु के सर्वांश को ग्रहण करता है उसे प्रमाण कहते हैं । जैसे—जीव कहने से समस्त जीवों का ग्रहण करना ।

(२) सच्चे ज्ञान को प्रमाण कहते हैं ।

नय—जो ज्ञान के एक देश को ग्रहण करता है उसे नय कहते हैं । जैसे—जीव कहने से संसारी और मुक्त ।

प्रश्न ९७– प्रमाण और नय के भेद बताइये ?

उत्तर– प्रमाण के ५ भेद हैं—१-मतिज्ञान २-श्रुतज्ञान ३-अवधिज्ञान ४-मन:पर्ययज्ञान ५-केवलज्ञान ।

नय के दो भेद हैं—१-निश्चय नय २-व्यवहार नय ।

प्रश्न ९८– निश्चय नय और व्यवहार नय का स्वरूप लिखिए ?

उत्तर– जो वस्तु के असली स्वरूप को ग्रहण करता है उसे निश्चय नय कहते हैं । जैसे—मिट्टी के घड़े को मिट्टी का कहना । किसी निमित्त के वश से एक पदार्थ को दूसरे रूप में ग्रहण से घी का घड़ा कहना ।

प्रश्न ९९– कारण किसे कहते हैं ? उसके भेद एवं स्वरूप बताइए ?

उत्तर– कार्य की उत्पादक सामग्री को कारण कहते हैं । कारण के दो भेद हैं—१-निमित्त कारण २-उपादान कारण ।

प्रश्न १००–निमित्त कारण किसे कहते हैं ?

उत्तर– जो पदार्थ स्वयं कार्यरूप न परिणमे किन्तु कार्य की उत्पत्ति में सहायक हो उसे निमित्त कारण कहते हैं । जैसे—घट की उत्पत्ति में कुम्भकार, दंड, चक्र आदिक ।

प्रश्न १०१–उपादान कारण किसे कहते हैं ?

उत्तर– जो पदार्थ स्वयं कार्य रूप परिणमें उसको उपादान कारण कहते हैं । जैसे—घट की उत्पत्ति में मिट्टी । कुण्डल की उत्पत्ति में सोना ।

प्रश्न १०२–जैनदर्शन के मूल सिद्धान्त कौन से हैं ? स्पष्ट कीजिए ।

उत्तर– जैनदर्शन के मूल सिद्धान्त १-अनेकान्त २-स्याद्वाद ।

१-अनेकान्त—अनेक याने बहुत, अन्त याने धर्म=जिसमें अनेक धर्म हैं उसे अनेकान्त कहते हैं । प्रत्येक वस्तु अनेकान्तमय है जैसे—१-शक्कर मीठी है, सफेद है, चौकोर है आदि अनेक धर्म उसमें विद्यमान हैं । २-लड़की पुत्री है पिता की अपेक्षा, पत्नी है पति की अपेक्षा और माँ है पुत्र की अपेक्षा । प्रत्येक वस्तु अनेक धर्मात्मक होती है ।

२-स्याद्वाद—अनेकान्त या अनेक धर्मात्मक वस्तु के कथन की शैली स्याद्वाद है । जैसे—शक्कर रस की अपेक्षा मीठी है, आकार की अपेक्षा चौकोर भी है और रंग रूप की अपेक्षा सफेद भी है । इस प्रकार अपेक्षाकृत कथन को स्याद्वाद कहते हैं ।

प्रश्न १०३–वस्तु का कथन कितने प्रकार से होता है ?

उत्तर– वस्तु का कथन सात भंगों से होता है । १-स्यात् अस्ति २-स्यात् नास्ति ३-स्यात् अस्ति नास्ति ४-स्यात् अवक्तव्य ५-स्यात् अस्ति अवक्तव्य ६-स्यात् नास्ति अवक्तव्य ७-स्यात् अस्ति नास्ति अवक्तव्य ।

प्रश्न १०४–उपयोग कितने और कौन से हैं ?

उत्तर– उपयोग दो होते हैं—१-ज्ञानोपयोग २-दर्शनोपयोग ।

(१) ज्ञानोपयोग के आठ भेद हैं—१-मतिज्ञान २-श्रुतज्ञान ३-अवधिज्ञान ४-मन:पर्ययज्ञान ५-केवलज्ञान ६-कुमतिज्ञान ७-कुश्रुतज्ञान ८-कुअवधिज्ञान ।

(२) दर्शनोपयोग के ४ भेद हैं—१-चक्षुदर्शन २-अचक्षुदर्शन ३-अवधिदर्शन ४-केवलदर्शन ।

प्रश्न १०५–मार्गणा कितनी होती हैं और कौन सी हैं ?

उत्तर– मार्गणा १४ होती हैं—

१-गति २-इन्द्रिय ३-काय ४-योग ५-वेद ६-कषाय ७-ज्ञान ८-संयम ९-दर्शन १०-लेश्या ११-भव्य १२-सम्यक्त्व १३-संज्ञी १४-आहारक ।

प्रश्न १०६–गुणस्थान कितने और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर– गुणस्थान १४ हैं—१-मिथ्यात्व २-सासादन ३-सम्यक्मिथ्यात्व (मिश्र) ४-अविरत ५-देशविरत ६-प्रमत्त ७-अप्रमत्त ८-अपूर्वकरण ९-अनिर्वृत्तिकरण १०-सूक्ष्मसाम्पराय ११-उपशान्तकषाय १२-क्षीणमोह १३-संयोग केवली १४-अयोग केवली ।

प्रश्न १०७–जीव समास कितने और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर– जीव समास १४ हैं—१-एकेन्द्रिय सूक्ष्म २-एकेन्द्रिय बादर ३-द्वीन्द्रिय ४-तीन इन्द्रिय ५-चतुरीन्द्रिय ६-पंचेन्द्रिय असैनी ७-पंचेन्द्रिय सैनी=७-पर्याप्त और ७ अपर्याप्त के भेद कुल ७+७=१४ जीव समास होते हैं ।

प्रश्न १०८–पर्याप्तियाँ कितनी और कौन-कौन सी हैं ?

उत्तर– पर्याप्ति छः—१-आहार पर्याप्ति २-शरीर पर्याप्ति ३-इन्द्रिय पर्याप्ति ४-श्वासोच्छ्वास ५-भाषा पर्याप्ति ६-मनःपर्याप्ति ।

प्रश्न १०९–प्राण कितने और कौन से हैं ?

उत्तर– प्राण १० होते हैं—१-एकेन्द्रिय प्राण २-दो इन्द्रिय प्राण ३-तीन इन्द्रिय प्राण ४-चार इन्द्रिय प्राण ५-पंचेन्द्रिय प्राण ६-मनोबल प्राण ७-वचन बल प्राण ८-काय बल प्राण ९-आयु प्राण १०-श्वासोच्छ्वास । प्राण १०—५ इन्द्रिय + ३ बल + आयु और + श्वासोच्छ्वास ।

प्रश्न ११०–संज्ञा कितनी और कौन-कौन सी हैं ?

उत्तर– संज्ञा चार होती हैं—१-आहार संज्ञा २-भय संज्ञा ३-मैथुन संज्ञा ४-परिग्रह संज्ञा ।

८–श्री सरस्वती स्तोत्रम्

चन्द्रार्ककोटि-घटितोज्ज्वल-दिव्य-मूर्ते,
श्रीचंद्रिका-कलित-निर्मल-शुभ्र-वस्त्रे ।
कामार्थदायि-कलहंस-समाधिरूढे,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ॥१॥

देवा-सुरेन्द्र-नतमौलिमणि-प्ररोचि,
श्री मञ्जरी-निविड-रंजितपाद-पद्मे ।
नीलालके प्रमद-हस्ति-समान-याने,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ॥२॥

केयूर-हार-मणि-कुण्डल-मुद्रिकाद्यैः,
सर्वांग-भूषण-मुनीन्द्र-नरेन्द्र-वंद्यै ।
नाना-सुरत्नवर-निर्मल-मौलि-युक्ते
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ॥३॥

मञ्जीरकोत्कनककंकण-किंकणीनां,
कांच्याश्च झंकृतरवेण विराजमाने ।
सद्धर्म-वारिनिधिसंतति-वर्द्धमाने,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ॥४॥

कंकेलिपल्लवविनिंदित-पाणि-पद्मे
पद्मासने दिवस-पद्म-समान वक्त्रे ।
जैनेन्द्रवक्त्र भवदिव्य-समस्त-भाषे,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ॥५॥

अर्द्धेन्दु-मण्डित-जटाललित-स्वरूपे,
शास्त्र प्रकाशिनि समस्तकलाधिनाथे ।
चिन्मुद्रिका-जपसराभय पुस्तकांके
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ॥६॥

डिण्डीरपिण्ड हिमशंख-सिताभ्रहारे,
पूर्णेन्दु-बिम्बरुचि-शोभितदिव्यगात्रे ।
चाञ्चल्यमान मृगशावललाटनेत्रे,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ॥७॥

पूज्ये पवित्रकरणोन्नतकामरूपे,
नित्यं फणीन्द्रागरुडाधिप किन्नरेन्द्रैः ।
विद्याधरेन्द्रसुरयक्षसमस्तवृन्दैः ।
वगीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ॥८॥

●

श्री सरस्वती स्तोत्रम्

सरस्वत्याः प्रसादेन काव्यं कुर्वन्ति मानवाः
तस्मान्निश्चलभावेन, पूजनीया सरस्वती ॥१॥

श्री सर्वज्ञमुखोत्पन्ना, भारती बहुभाषिणी ।
अज्ञानतिमिरं हन्ति, विद्याबहुविकासिनी ॥२॥

सरस्वती मया दृष्टा दिव्याकमल-लोचना ।
हंसस्कंध-समारूढ़ा, वीणा-पुस्तक-धारिणी ॥३॥

प्रथमं भारती नाम, द्वितीयं च सरस्वती ।
तृतीयं शारदादेवी, चतुर्थं हंसगामिनी ॥४॥

पञ्चमं विदुषां माता, षष्ठं वागीश्वरि तथा ।
कुमारी सप्तमं प्रोक्तं, अष्टमं ब्रह्मचारिणी ॥५॥

नवम च जगन्माता, दशमं ब्राह्मिणी तथा ।
एकादशं तु ब्रह्माणी, द्वादशं वरदा भवेत् ॥६॥

वाणी त्रयोदशं नाम, भाषाचैव चतुर्दशम् ।
पञ्चदशं श्रुतदेवी, षोडशं गौर्निगद्यते ॥७॥

एतानि श्रुतनामानि, प्रातरुत्थाय यः पठेत् ।
तस्य सन्तुष्यति माता, शारदा वरदा भवेत् ॥८॥

सरस्वती ! नमस्तुभ्यं, वरदे ! कामरूपिणी. ।
विद्यारम्भं करिष्यामि सिद्धिर्भवतु मे सदा ॥९॥

●

९-जिनवाणी स्तुति

माता तू दया करके करमों से छुड़ा लेना ।
इतनी सी विनय तुम से, चरणों में जगह देना ।।

माता आज मैं भटका हूँ, माया के अंधेरे में,
कोई नहीं मेरा है, इस कर्म के रेले में ।
कोई नहीं मेरा है, तुम धीर बँधा देना,
इतनी सी विनय तुम से, चरणों में जगह देना ।।१।।

जीवन के चौराहे पर, मैं सोच रहा कब से,
जाऊँ तो किधर जाऊँ, मैं पूछ रहा तुम से ।
पथ भूल गया हूँ मैं, तुम राह दिखा देना,
इतनी सी विनय तुम से, चरणों में जगह देना ।।२।।

लाखों को उबारा है, मुझको भी उबारो तुम,
मझधार में है नैय्या, उसको भी तिरा दो तुम ।
मझधार में भटका हूँ, तुम पार लगा देना,
इतनी सी विनय तुम से, चरणों में जगह देना ।।३।।

●

१०-गुर्वाष्टक

(पं० वृन्दावन)

संघसहित श्रीकुन्दकुन्द गुरु, वंदनहेत गये गिरनार ।
वाद पर्‌यो तहँ संशयमतिसों, साक्षी वदी अंबिकाकार ।।
'सत्यपंथ निरग्रंथ दिगम्बर', कही सुरी तहँ प्रकट पुकार ।
सो गुरु देव बसौ उर मेरे, विघ्नहरण मंगल करतार ।।१।।

स्वामी समंतभद्र मुनिवरसों, शिवकोटी हठ कियो अपार ।
वंदन करो शुंभपिंडिको, तब गुरु रच्यो स्वयंभू सार ।
वंदन करत पिंडिका फाटी, प्रगट भये जिनचन्द्र उदार ।
सो गुरु देव बसौ उर मेरे, विघ्नहरण मंगल करतार ।।२।।

श्री अकलंक देव मुनिवरसों, वाद रच्यो जहँ बौद्ध विचार ।
तारादेवी घट में थापी, पटके ओट करत उच्चार ।।
जीत्यो स्याद्वादबल मुनिवर, बौद्धबोध तारा मदटार ।
सो गुरु देव बसौ उर मेरे, विघ्नहरण मंगल करतार ।।३।।

श्रीमत विद्यानन्दि जबै, श्रीदेवागमथुति सुनी सुधार ।
अर्थहेत पहुँच्यो जिनमन्दिर, मिल्यो अर्थ तहँ सुखदातार ।।
तब व्रत परमदिगम्बरको धर, परमतको कीनों परिहार ।
सो गुरु देव बसौ उर मेरे, विघ्नहरण मंगल करतार ।।४।।

श्रीमत मानतुंग मुनिवर, पर भूप कोप जब कियौ गंवार ।
बंद किये तालों में तबही, भक्तामर गुरु रच्यौ उदार ।।
चक्रेश्वरी प्रगट तब ह्वै कै, बंधनकाट कियो जयकार ।
सो गुरु देव बसौ उर मेरे, विघ्नहरण मंगल करतार ।।५।।

श्रीमत वादिराज मुनिवरसों, कह्यो कुष्टि भूपति जिहँ बार ।
श्रावक सेठ कह्यो तिहँ अवसर, मेरे गुरु कंचन तनधार ।।
तबही एकीभाव रच्यो गुरु, तन सुवरणदुति भयौ अपार ।
सो गुरु देव बसौ उर मेरे, विघ्नहरण मंगल करतार ।।६।।

श्रीमत कुमुदचन्द्र मुनिवरसों, वाद पर्‌यो जहँ सभा मंझार ।
तब ही श्रीकल्याणधाम थुति, श्री गुरु रचना रची अपार ।
तब प्रतिमा श्री पार्श्वनाथ की, प्रगट भई त्रिभुवन जयकार ।
सो गुरु देव बसौ उर मेरे, विघ्नहरण मंगल करतार ।।७।।

श्रीमत अभयचन्द्र गुरुसों, जब दिल्लीपति इमि कहो पुकार ।
कै तुम मोहि दिखावहु अतिशय, कै पकरौं मेरी मत सार ।
तब गुरु प्रगट अलौकिक अतिशय, तुरत हर्‌यो ताको मदभार ।
सो गुरु देव बसौ उर मेरे, विघ्नहरण मंगल करतार ।।८।।

दोहा

विघन हरण मंगल करण, वांछित फलदातार ।
'वृन्दावन' अष्टक रच्यो, करौ कंठ सुखकार ।।

●

माँ जिनवाणी स्तुति

माँ जिनवाणी ममता न्यारी, प्यारी-प्यारी गोद है थारी ।
आंचल में मुझको तू रखले, तू तीर्थंकर राजदुलारी ।। टेक ।।

वीर प्रभो पर्वत निर्झरणी, गौतम के मुख कंठ झरी हो ।
अनेकान्त और स्याद्वाद की, अमृतमय माता तुम ही हो ।
भव्यजनों की कर्णपिपासा, तुझसे शमन हुई जिनवाणी ।। 1 ।।
माँ जिनवाणी................

सप्तभंग मय लहरों से माँ, तू ही सप्त तत्व प्रकटाये ।
द्रव्य गुणों अरू पर्यायों का, ज्ञान आत्मा में करवाये ।।
हेय ज्ञेय अरु उपादेय का, भान हुआ तुझसे जिनवाणी ।। 2 ।।
माँ जिनवाणी................

तुझको जानूं तुझको समझूं, तुझसे आतम बोध को पाऊं ।
तेरे आंचल में छिप-छिपकर दुग्धपान अनुयोग का पाऊं ।
मां बालक की रक्षा करना, मिथ्यातम को हर जिनवाणी ।। 3 ।।
माँ जिनवाणी................

धीर बनूं मैं वीर बनूं माँ, कर्मबली को दल-दल जाऊं ।
ध्यान करुं स्वाध्याय करुं बस, तेरे गुण को निशदिन गाऊं ।
अष्ट करम की हान करे यह, अष्टम क्षिति को दे जिनवाणी ।। 4 ।।
माँ जिनवाणी................

ऋषि मुनि यति सब ध्यान धरे माँ, शरण प्राप्त कर कर्म हरें ।
सदा मात की गोद रहूं मैं, ऐसा शिर आशीष फले ।
नमन करे ''स्याद्वादमती'' नित, आत्म सुधारस दे जिनवाणी ।। 5 ।।
माँ जिनवाणी................

गणिनी आर्यिका स्याद्वादमती

पतित पावन तरण तारण, हमारी फरियाद सुन लेना ।
तेरे चरणों में मस्तक है, हमें अपना बना लेना ।।

lasting impressions

R. K. MARBLE GROUP

Corporate Office: Madanganj - Kishangarh - 305 801, Dist. Ajmer (Raj.)
Tel: +91-1463-301100, 260101-10, Fax: +91-1463-250601
E-mail: info@rkmarble.com Web: www.rkmarble.com